International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

आधुनिक वास्तु सिद्धांत बनाम परंपरागत वास्तु भूमि आकृति की विवेचना

सौरभ कुमार

शोधार्थी, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय - 110007

भूमिका
प्रस्तुत शोधपत्र में प्राचीन वास्तुशास्त्र के सिद्धांतों को आधार मानकर आधुनिक वास्तु सिद्धांत और परंपरागत वास्तु शास्त्र में वर्णित भूमि आकृतियों की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है। इसमें 'वास्तु' शब्द की व्युत्पत्ति, वास्तुशास्त्र का ऐतिहासिक विकास, शास्त्रीय ग्रंथों में वर्णित सिद्धांत, भूमि आकृतियों का दार्शनिक एवं व्यवहारिक विश्लेषण, तथा समकालीन स्थापत्य विज्ञान के संदर्भ में आधुनिक दृष्टिकोण का समन्वित अध्ययन किया गया है। शोध का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार पारंपरिक सिद्धांत आधुनिक वास्तुकला और शहरी नियोजन में प्रासंगिक हैं। वास्तु का तात्पर्य उस स्थान से है जहाँ जीवन का निवास और विकास संभव हो। मत्स्य पुराण में कहा गया है—

शब्द कुंजी: सारांश, वास्तु की व्युत्पत्ति और परिभाषा, वास्तुशास्त्र का इतिहास, परम्परागत वास्तु में भूमि आकृतियां, आधुनिक वास्तु सिद्धांत, तुलनात्मक अध्ययन, निष्कर्ष, Foot Notes, सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

'वास्तुशास्त्रं सर्वविद्यानां प्रतिष्ठा भवति।' [1]
अर्थात वास्तुशास्त्र सभी विद्याओं का आधार है।

वास्तु की व्युत्पत्ति एवं परिभाषा
'वास्तु' शब्द की व्युत्पत्ति 'वस्' धातु से मानी गई है, जिसका अर्थ है 'निवास करना'। अमरकोश में 'वास्तु' का अर्थ भवन, गृह और भूमि बताया गया है।[2] मयमतम् में कहा गया है— **'भूमिर्वास्तु इति ज्ञेया'** — अर्थात भूमि ही वास्तु है।[3] इससे स्पष्ट है कि वास्तु का मूल आधार भूमि है।
'शास्त्र' शब्द '√शास् (अनुशिष्टौ)' धातु से बना है, जिसका अर्थ है—शिक्षा देना, शासन करना या नियम स्थापित करना।[4]
'शास्' धातु में 'त्र' प्रत्यय लगने से 'शास्त्र' शब्द बनता है, जिसका अर्थ है—नियमों या उपदेशों का संग्रह।
अतः 'वास्तु' + 'शास्त्र' = वास्तुशास्त्र, अर्थात् निवास–स्थान से संबंधित नियमों का विज्ञान।
वास्तुशास्त्र का उद्देश्य केवल भवन–निर्माण नहीं, बल्कि दिशाओं, ग्रह–नक्षत्रों, भूमिपरीक्षा और मानव–कल्याण का समन्वय है।
विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र में कहा गया है—
"वास्तुशास्त्रं सर्वविद्यानां प्रतिष्ठा भवति।" [5]
अर्थात् वास्तुशास्त्र सभी विद्याओं की आधारभूमि है।
मयमतम् में वास्तु की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—

"भूमेः परीक्षणं पूर्वं वास्तुशास्त्रविदा बुधैः।" [6]
अर्थात् बुद्धिमान वास्तु–विद पहले भूमि की परीक्षा करते हैं।
बृहत्संहिता (वराहमिहिर) में भी वास्तु के महत्त्व का वर्णन है—
"गृहनिर्माणविधिं वक्ष्ये लोकानां हितकाम्यया।" [7]
अर्थात् लोक–हित की कामना से मैं गृह–निर्माण की विधि कहता हूँ।

वास्तुशास्त्र का इतिहास

- **वैदिक काल में वास्तु का स्वरूप**

वास्तुशास्त्र की जड़ें वैदिक साहित्य में पाई जाती हैं। ऋग्वेद (ऋग्वेद, मण्डल 7, सूक्त 54, मंत्र 1), यजुर्वेद (वाजसनेयी संहिता (शुक्ल यजुर्वेद), अध्याय 3, मंत्र 45) और अथर्ववेद में गृह, वेदिका, यज्ञशाला तथा नगर-रचना के संकेत मिलते हैं। अथर्ववेद में पृथ्वी को माता और भवन को उसके अंग के रूप में वर्णित किया गया है।[8]
वैदिक यज्ञों के लिए वेदियों का निर्माण विशेष माप और दिशा के अनुसार किया जाता था। यह दर्शाता है कि उस समय दिशा, मापन और ज्यामिति का ज्ञान विकसित था। 'शुल्बसूत्र' में वेदियों के निर्माण हेतु ज्यामितीय सिद्धांतों का उल्लेख मिलता है, जो वास्तुशास्त्र के वैज्ञानिक आधार को प्रमाणित करता है।

- **उत्तरवैदिक एवं महाकाव्य काल**

रामायण

अयोध्या नगरी का विस्तृत वर्णन **बालकाण्ड, सर्ग 5–6** में मिलता है-
कोसलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान्।
निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान्॥ [9]
—
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता।
मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम्॥ [10]
—
वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के इन श्लोकों में अयोध्या को योजनाबद्ध, धनधान्य से सम्पन्न, सुदृढ़ प्राकार (दीवारों), द्वारों और राजमार्गों से युक्त बताया गया है।
लंका का वर्णन मुख्यतः **सुन्दरकाण्ड, सर्ग 2–5** तथा **युद्धकाण्ड** में मिलता है।
स तां पुरीं लङ्कां दृष्ट्वा हनुमान् मारुतात्मजः।
प्राकारतोरणोपेतां सुविभक्तमहापथाम्॥ [11]
—
वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड में यहाँ लंका को ऊँचे प्राकारों (किलों), तोरणद्वारों और सुव्यवस्थित मार्गों से युक्त बताया गया है। स्वर्ण-मंडित महलों और बहुमंज़िला भवनों का भी वर्णन है।

महाभारत

इंद्रप्रस्थ का वर्णन मुख्यतः **सभापर्व** में मिलता है।
ततो ददर्श धर्मात्मा पाण्डवानां महात्मनाम्।
मयं निर्मितमत्यद्भुतं सभां देवसभोपमाम्॥ [12]
—

महाभारत के सभापर्व में यहाँ मय दानव द्वारा निर्मित सभा का वर्णन है, जो अत्यंत भव्य, भ्रमोत्पादक स्थापत्य और दिव्य योजना से निर्मित बताई गई है।
अतः रामायण में अयोध्या को चौड़ी सड़कों, सुसज्जित भवनों और समुचित जल-व्यवस्था से युक्त बताया गया है। महाभारत में मय दानव द्वारा निर्मित मयसभा वास्तु-कौशल का अद्भुत उदाहरण है। इससे स्पष्ट होता है कि उस समय नगर-योजना और स्थापत्य-कला उच्च स्तर पर विकसित थी।

- **शास्त्रीय काल में वास्तुशास्त्र का विकास**

गुप्त काल से लेकर मध्यकाल तक वास्तुशास्त्र का व्यवस्थित ग्रंथ-रूप में विकास हुआ। इस काल में अनेक प्रसिद्ध वास्तु-ग्रंथ रचे गए, जैसे—मयमतम्, मानसार, समरांगण सूत्रधार, विश्वकर्मा प्रकाश, अपराजितपृच्छा, बृहत्संहिता आदि । इन ग्रंथों में भवन निर्माण की विधि [13], भूमि परीक्षण [14], दिशा-निर्धारण [15], आयाम [16], मण्डल विन्यास [17], मंदिर निर्माण [18], मूर्ति-स्थापन [19], नगर-योजना [20] आदि का विस्तार से वर्णन है।
विशेषतः समरांगण सूत्रधार में राजमहलों, मंदिरों तथा यंत्रों के निर्माण तक का उल्लेख मिलता है। बृहत्संहिता में वराहमिहिर ने वास्तु के सिद्धांतों को ज्योतिष के साथ जोड़ा है।

- **मंदिर स्थापत्य और वास्तु**

भारतीय वास्तु का सर्वाधिक विकसित रूप मंदिर स्थापत्य में दिखाई देता है। उत्तर भारत की नागर शैली, दक्षिण भारत की द्रविड़ शैली और मिश्रित वेसर शैली इसके प्रमुख उदाहरण हैं। मंदिर निर्माण में 'वास्तुपुरुष मण्डल' का विशेष महत्व है।[21] यह एक ज्यामितीय योजना है जिसमें भवन का केंद्र ब्रह्मस्थान माना जाता है। मंदिरों की रचना इस प्रकार की जाती थी कि वे प्राकृतिक ऊर्जा और दिशात्मक संतुलन को समाहित कर सकें।

- **मध्यकालीन और क्षेत्रीय प्रभाव**

मध्यकाल में इस्लामी स्थापत्य के प्रभाव से भारतीय वास्तु में कुछ परिवर्तन हुए। मेहराब, गुम्बद और मीनार जैसी संरचनाएँ जुड़ीं। फिर भी पारंपरिक दिशा-विन्यास और आधारभूत सिद्धांत अनेक स्थानों पर सुरक्षित रहे। [22]
राजस्थान, गुजरात, ओडिशा, तमिलनाडु और कर्नाटक में क्षेत्रीय स्थापत्य शैलियाँ विकसित हुईं, जो स्थानीय जलवायु, सामग्री और सांस्कृतिक परंपराओं के अनुरूप थीं।

- **औपनिवेशिक काल और आधुनिक प्रभाव**

ब्रिटिश काल में पाश्चात्य स्थापत्य शैली का प्रभाव बढ़ा। भवन निर्माण में पारंपरिक वास्तु सिद्धांतों की उपेक्षा होने लगी। परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक ज्ञान जीवित रहा। [23]
स्वतंत्रता के बाद आधुनिक वास्तुकला और इंजीनियरिंग के साथ-साथ वास्तुशास्त्र का पुनर्जागरण हुआ। आज वास्तु को पारंपरिक ज्ञान और पर्यावरणीय संतुलन के रूप में पुनः महत्व मिल रहा है।
आज वास्तुशास्त्र को केवल धार्मिक या अंधविश्वास नहीं माना जाता, बल्कि इसे पर्यावरण-अनुकूल जीवनशैली और ऊर्जा संतुलन के रूप में देखा जा रहा है।
आधुनिक वास्तु-विशेषज्ञ पारंपरिक सिद्धांतों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ जोड़कर प्रस्तुत कर रहे हैं। भवनों में प्रकाश, वायु, जल-निकास, दिशा और स्थान-व्यवस्था का समुचित ध्यान रखा जा रहा है, जो वास्तु के मूल सिद्धांतों से मेल खाता है।

परंपरागत वास्तु में भूमि आकृतियां

परंपरागत वास्तुशास्त्र में भूमि के आकार को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। समचतुर्भुज (वर्गाकार) और आयताकार भूमि को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। [24] त्रिकोण, वक्र या विषम आकार की भूमि को अशुभ कहा गया है। बृहत्संहिता में उल्लेख है— '**समभूमिः शुभदा नित्यं**' — सम भूमि सदा शुभ फलदायिनी होती है।[25] भूमि परीक्षण में रंग, गंध, स्वाद और ध्वनि की भी परीक्षा की जाती थी।[26]

1. वर्गाकार (Square Plot – वर्ग भूमि)

जिस भूमि की चारों भुजाएँ समान हों तथा चारों कोण समकोण (९०°) हों, उसे **वर्गाकार भूमि (वर्ग क्षेत्र)** कहा जाता है। वास्तुशास्त्र में इसे अत्यंत शुभ, संतुलित और समृद्धिदायक माना गया है।

वर्ग भूमि समत्व, स्थिरता और संतुलन का प्रतीक है। यह आकृति पृथ्वी तत्व (भूमि तत्त्व) का प्रतिनिधित्व करती है, अतः स्थायित्व, धैर्य और आर्थिक उन्नति से इसका संबंध जोड़ा गया है।

मत्स्यपुराण के अनुसार —

"चतुरश्रं समं क्षेत्रं सर्वसौख्यप्रदं स्मृतम्।" [27]

अर्थात् समचतुर्भुज (वर्गाकार) भूमि सर्व प्रकार के सुख देने वाली मानी गई है।

2. आयताकार (Rectangular Plot – आयत भूमि)

वास्तुशास्त्र में भूमि के आकार का अत्यन्त महत्त्व है। आयताकार भूमि (आयत भूमि) वह है जिसमें लम्बाई और चौड़ाई असमान होती हैं, परन्तु चारों कोण समकोण (90°) के होते हैं। इसे शुभ एवं समृद्धिदायक माना गया है, विशेषतः जब भूमि की लम्बाई पूर्व-पश्चिम या उत्तर-दक्षिण दिशा में संतुलित रूप से विस्तृत हो।

समराङ्गणसूत्रधार के अनुसार -

"दीर्घचतुरश्रभूमिः शुभा सर्वार्थसिद्धिदा।"[28]

अर्थात् दीर्घ (आयताकार) चतुरस्र भूमि शुभ होती है और सभी प्रकार की सिद्धि प्रदान करती है।

3. त्रिकोणाकार (Triangular Plot – त्रिभुज भूमि)

त्रिकोणाकार भूमि वह है जिसकी तीन भुजाएँ और तीन कोण होते हैं। वास्तुशास्त्र में यह "विषम भू-आकृति" (Irregular Plot) के अंतर्गत आती है। ऐसी भूमि में ऊर्जा (प्राण-चेतना) का संतुलन समान रूप से नहीं बन पाता, क्योंकि वास्तु पुरुष मंडल का मूल आधार चतुरस्र योजना है।

विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार -

"त्रिभुजा भूमिरत्यर्थं क्लेशदुःखप्रदायिनी।
न तत्र सुखमावासो न च लक्ष्म्याः स्थिरं पदम्॥" [29]

अर्थात् त्रिभुज भूमि अत्यधिक क्लेश और दुःख देने वाली है; वहाँ सुखपूर्वक निवास नहीं होता और लक्ष्मी (समृद्धि) भी स्थिर नहीं रहती।

4. वृत्ताकार (Circular Plot – गोल भूमि)

वास्तुशास्त्र में भूमि की आकृति (भूमि-आकार) को अत्यंत महत्त्व दिया गया है। प्राचीन ग्रंथों में भूमि को विभिन्न आकृतियों—चतुरस्र (वर्गाकार), आयत, त्रिकोण, वृत्त आदि—में विभाजित कर उनके फल बताए गए हैं। इनमें **वृत्ताकार भूमि (गोल भूमि)** एक विशेष प्रकार की आकृति मानी गई है।

मयमतम् के अनुसार -

"वृत्तायतं समं भूमिं देवतायतने शुभम्।" [30]

अर्थात् सम (संतुलित) वृत्ताकार भूमि देवायतन (मंदिर) के लिए शुभ मानी गई है।

5. अंडाकार (Oval Plot)

अण्डाकार (Oval) भूमि पूर्णतः न तो आयताकार होती है और न ही वृत्ताकार; अतः इसे परंपरागत वर्गीकरण में "अनियमित" अथवा "विशेष" आकृतियों में रखा गया है।

अनियमित भूमि के विषय में विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र में कहाँ गया है-

"विषमाकारा भूमिः स्यात् दुःखदारिद्र्यकारिणी।" [31]

अर्थ: विषम (अनियमित) आकृति वाली भूमि दुःख और दरिद्रता देने वाली मानी गई है।

अण्डाकार भूमि पूर्णतः सममित न होने पर इसी श्रेणी में आ सकती है।

6. एल-आकार (L-Shape Plot)

एल-आकार की भूमि मूलतः आयत या वर्ग से विचलित आकृति है, जिसमें किसी एक कोने का अभाव या विस्तार असंतुलित रूप में होता है। इसे शास्त्रों में *विकृत भूमि, छिन्न भूमि* या *अनियमित भूमि* के अंतर्गत रखा गया है।

विकृत एवं छिन्न भूमि के विषय में कहा गया हैं -

"विकृतां छिन्नभागां वा भूमिं न निवसेत् बुधः।" — समरांगण सूत्रधार [32]

अर्थात् बुद्धिमान व्यक्ति विकृत या कटी-फटी भूमि में निवास न करे।

"असमानां नरेन्द्राणां दुःखदां भूमिमादिशेत्।"— *बृहत्संहिता* (वास्तु अध्याय) [33]

अर्थात् असमान (अनियमित) भूमि दुःखदायी कही गई है।

एल-आकार की भूमि प्रायः किसी दिशा का अभाव (कटाव) या किसी कोने का अत्यधिक विस्तार दर्शाती है, अतः यह *छिन्न* या *विकृत* भूमि की श्रेणी में आती है।

7. गौमुखी भूमि (Cow-faced Plot)

वास्तुशास्त्र में गौमुखी भूमि उस भू-आकृति को कहा जाता है जो सामने (मुखभाग) से संकीर्ण तथा पीछे (पृष्ठभाग) से विस्तृत हो। इसका आकार गौ (गाय) के मुख के समान माना जाता है, इसलिए इसे गौमुखी कहा गया है।

"गौमुखी" शब्द का अर्थ है —**"गवां मुखमिव आकारो यस्य सा गौमुखी"** — अर्थात् जिसका आकार गाय के मुख के समान हो।

बृहत्संहिता (भूमि-लक्षण अध्याय) के अनुसार

गौमुखी धनदा प्रोक्ता व्याघ्रमुखी विनाशिनी।

***गृहे तु गौमुखी श्रेष्ठा सर्वसौख्यप्रदा स्मृता॥**[34]

अर्थात् – गौमुखी भूमि धन देने वाली कही गई है, जबकि व्याघ्रमुखी विनाशकारक होती है। गृह निर्माण के लिए गौमुखी भूमि सर्वसुखदायिनी मानी गई है।

विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र के अनुसार

अग्रे संकीर्णा या भूमिः पृष्ठे विस्तीर्णा भवेत्।

सा गौमुखी समाख्याता धनधान्यप्रवर्धिनी॥[35]

अर्थ – जो भूमि आगे से संकीर्ण और पीछे से विस्तृत हो, उसे गौमुखी कहा जाता है; वह धन-धान्य की वृद्धि करने वाली होती है।

8. शेरमुखी भूमि (Lion-faced Plot)

वास्तुशास्त्र में जिस भूमि का अग्रभाग (सामने का भाग) संकीर्ण तथा पश्चभाग (पीछे का भाग) विस्तृत होता है, उसे **शेरमुखी भूमि (सिंहमुखी भूमि)** कहा जाता है। इसका आकार शेर के मुख के समान आगे से संकुचित और पीछे से विस्तृत होता है।

मयमतम् के अनुसार -

सिंहमुखी तु या भूमिः पृष्ठे विस्तीर्णता भवेत्।
अग्रे संकुचिता ज्ञेया सा वाणिज्ये शुभप्रदा॥[36]

अर्थात् जो भूमि पीछे की ओर चौड़ी तथा सामने की ओर संकीर्ण हो, वह सिंहमुखी कहलाती है और व्यापार के लिए शुभ मानी गई है।

9. कटावयुक्त (Irregular / Cut Plot)

- किसी कोने का कटा होना।
- विशेष रूप से ईशान (उत्तर-पूर्व) या नैऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) का कटाव अशुभ।

फल: स्वास्थ्य, धन या संबंधों में बाधा।

आधुनिक वास्तु सिद्धांत

आधुनिक वास्तु सिद्धांत पारंपरिक सिद्धांतों का पुनर्पाठ करते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाता है। आज के संदर्भ में सूर्यप्रकाश, वेंटिलेशन, पर्यावरणीय संतुलन, ऊर्जा दक्षता, और शहरी नियोजन को विशेष महत्व दिया जाता है। ग्रीन बिल्डिंग, सतत विकास (Sustainable Development), और बायो-क्लाइमेटिक आर्किटेक्चर आधुनिक वास्तु के प्रमुख आयाम हैं।[37] आधुनिक वास्तुकार पारंपरिक दिशानुसार योजना को जलवायु आधारित डिजाइन से जोड़ते हैं।[38]

आधुनिक वास्तु सिद्धांत निम्न आधारों पर कार्य करता है:-

(1) पर्यावरणीय संतुलन

प्राकृतिक प्रकाश, वायु संचार (Ventilation), तापमान नियंत्रण और हरित क्षेत्र का संतुलन।

(2) मनोवैज्ञानिक प्रभाव

स्थान की संरचना (Layout), रंग, प्रकाश और खुलापन व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य, तनाव स्तर और व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

(3) कार्यात्मकता (Functionality)

कमरों का उपयोग उनके उद्देश्य के अनुसार - जैसे रसोई, शयनकक्ष, कार्यक्षेत्र आदि का व्यावहारिक और सुविधाजनक विन्यास।

(4) ऊर्जा दक्षता (Energy Efficiency)

सौर ऊर्जा, वर्षा जल संचयन, प्राकृतिक रोशनी का अधिकतम उपयोग होता हैं।

तुलनात्मक अध्ययन

परंपरागत वास्तु भूमि की आकृति को आध्यात्मिक एवं ऊर्जात्मक दृष्टि से देखता है [29], जबकि आधुनिक वास्तुकला उसे कार्यात्मक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझती है।[30] दोनों में साम्य यह है कि समरूपता, संतुलन और

दिशानुकूलता को महत्व दिया जाता है। भिन्नता यह है कि आधुनिक सिद्धांत अनुभवजन्य अनुसंधान और तकनीकी मापदंडों पर आधारित हैं।

निष्कर्ष

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आधुनिक वास्तु सिद्धांत और परंपरागत वास्तु भूमि आकृति की व्याख्या परस्पर विरोधी नहीं हैं, बल्कि पूरक हैं। परंपरा से प्राप्त ज्ञान को वैज्ञानिक परीक्षण के साथ जोड़कर वर्तमान समय में अधिक प्रभावी और उपयोगी बनाया जा सकता है। इस प्रकार वास्तुशास्त्र अतीत और वर्तमान के बीच सेतु का कार्य करता है।

Foot Notes

1. मत्स्य पुराण, अध्याय 252.
2. अमरकोश, काण्ड 2.
3. मयमतम्, अध्याय 1.
4. धातुपाठ — **"शास अनुशिष्टौ।"**
5. विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र, अध्याय 1
6. मयमतम्, प्रथम अध्याय
7. बृहत्संहिता, अध्याय 53 (गृहाध्याय)

1. 8.अथर्ववेद, काण्ड 12, सूक्त 1, मंत्र 12.

8. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 5, श्लोक 5
9. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, सर्ग 5, श्लोक 6
10. वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकाण्ड, सर्ग 2
11. महाभारत, सभापर्व, अध्याय 1–3 (मयसभा वर्णन)
12. Mayamata, trans. Bruno Dagens, Vol. I, Indira Gandhi National Centre for the Arts (IGNCA), Delhi, 1994, Chapters 1–5.
13. Varahamihira, Brihat Samhita, Chapter 53 (Vastu Vidya), Motilal Banarsidass, 1981.
14. King Bhoja, Samarangana Sutradhara, trans. D.N. Shukla, 1966, Chapters 6–8.
15. Acharya, P.K., Manasara Series, Vol. II, Chapters on Measurement (Mana-adhyaya).
16. Dagens, Bruno, Mayamata, Chapter on Vastu-Purusha-Mandala.
17. Bhoja, Samarangana Sutradhara, Chapters 49–65 (Temple Architecture).
18. Agni Purana, Chapters 42–55 (Pratima Lakshana).
19. Manasara, Chapters on Nagar Vinyasa
20. पर्सी ब्राउन, *इंडियन आर्किटेक्चर (बौद्ध एवं हिन्दू काल)*, मुंबई: डी.बी. तारापोरवाला सन्स, 1942, पृ. 45–60।
21. कैथरीन बी. एशर, *Architecture of Mughal India*, कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1992, पृ. 3–20
22. Thomas R. Metcalf, *An Imperial Vision: Indian Architecture and Britain's Raj* (Berkeley: University of California Press, 1989), 12–35.
23. ऋग्वेद, मंडल 7.
24. वराहमिहिर, बृहत्संहिता, अध्याय 53.
25. मानसार, अध्याय 3.

26. मत्स्यपुराण, अध्याय २५२ (भूमि-लक्षण वर्णन)।
27. समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय 8, भूमिलक्षण वर्णन।
28. विश्वकर्मा प्रकाश, भूमि परीक्षण अध्याय
29. *मयमतम्*, अध्याय 3, भूमिपरीक्षा प्रकरण।
30. विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र, भूमिलक्षण अध्याय।
31. समरांगण सूत्रधार, अध्याय 11 (भूमि परीक्षा)।
32. बृहत्संहिता, अध्याय 53 (वास्तु विचार)।
33. बृहत्संहिता, वराहमिहिर, अध्याय 53 (भूमि-लक्षण वर्णन में विभिन्न भू-आकृतियों के फल का उल्लेख)।
34. विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र, भूमि-परीक्षा प्रकरण, श्लोक संदर्भ (परंपरागत पांडुलिपि संस्करणों में भिन्न पाठभेद संभव)।
35. मयमतम्, अध्याय 8, भूमिलक्षणवर्णनम्।
36. P.K. Acharya, *Architecture of Manasara* (Oxford: Oxford University Press, 1934).
37. Francis D.K. Ching, *Architecture: Form, Space, and Order* (Hoboken: Wiley, 2014).

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Acharya, P. K. *Architecture of Manasara*. Oxford: Oxford University Press, 1934.
2. Acharya, P. K. *Manasara Series*, Vol. II: Chapters on Measurement (Mana-adhyaya). Delhi: Munshiram Manoharlal, 1934.
3. Agni Purana. Chapters 42–55 (Pratima Lakshana).
4. Asher, Catherine B. *Architecture of Mughal India*. Cambridge: Cambridge University Press, 1992.
5. Atharvaveda. Kanda 12, Sukta 1, Mantra 12.
6. Baker, Laurie. *Cost Effective Architecture*.
7. Bhoja, King. *Samarangana Sutradhara*. Translated by D. N. Shukla. 2 vols. Baroda: Oriental Institute, 1966.
8. Brown, Percy. *Indian Architecture (Buddhist and Hindu Period)*. Mumbai: D. B. Taraporevala Sons, 1942.
9. Brihat Samhita. By Varahamihira. Chapter 53 (Vastu Vidya). Delhi: Motilal Banarsidass, 1981.
10. Ching, Francis D. K. *Architecture: Form, Space, and Order*. Hoboken: Wiley, 2014.
11. Correa, Charles. *Housing and Urbanization Studies*.
12. Dagens, Bruno, trans. *Mayamata*, Vol. I. Delhi: Indira Gandhi National Centre for the Arts, 1994.
13. Dagens, Bruno. *Mayamata: Chapter on Vastu-Purusha-Mandala*. Delhi: IGNCA, 1994.
14. Mahabharata. Sabha Parva, Chapters 1–3 (Maya Sabha description).
15. Manasara. Chapters on Nagar Vinyasa.
16. Manasara. Chapter 3.
17. Mayamata. Chapters 1–5.
18. Metcalf, Thomas R. *An Imperial Vision: Indian Architecture and Britain's Raj*. Berkeley: University of California Press, 1989.
19. Matsya Purana. Chapter 252.
20. Mayamata. Chapter 1.
21. Ramayana (Valmiki). Bala Kanda, Sarga 5, Shlokas 5–6.
22. Ramayana (Valmiki). Sundara Kanda, Sarga 2.

23. Rigveda. Mandala 7.
24. Samarangana Sutradhara. Chapters 49–65 (Temple Architecture).
25. Vishvakarma Vastu Shastra. Chapter 1.
26. Varahamihira. *Brihat Samhita*. Chapter 53 (Grihadhyaya).